MPPSC

मुख्य परीक्षा

पेपर-6

Awarded for
Resell Oriented Academy
For UPSC/MPPSC-2019
by **Kamal Nath** (CM M.P.)

Awarded for
Leading E-Learning
Academy of MP-2018
by **Shivraj Singh Chouhan** (CM M.P.)

स्थापना पंजीयन क्रमांक : C/177429

शर्मा एकेडमी®

an Institute for IAS/IPS, MPPSC

© Surendra Sharma (Sharma Academy) all rights reserved.
This E-book is Proprietary & Copyrighted Material of Sharma Academy. Any reproduction in any form, electronic, mechanical, photocopying, recording physical or otherwise, mode on public forum etc will lead to infringement of Copyright of Sharma Academy and will attract penal actions including FIR and claim of damages under Indian Copyright Act 1957

हिंदी निबंध एवं प्रारूप लेखन	पेज नं.
प्रथम निबंध (लगभग 100 शब्दों में) : निम्नांकित क्षेत्रों से निबंध पूछा जा सकता है। जैसे– पर्यावरण (2), विज्ञान (4), धर्म–अध्यात्म (6), शिक्षा में गुणवत्ता (8), आधुनिकीकरण (14), भूमंडलीकरण (20), उदारीकरण (22), कृत्रिम बुद्धिमता (24), परम्परागत खेल (25), सांस्कृतिक विरासत (29), सभ्यता एवं संस्कृति (31), योग एवं स्वास्थ्य (43), ई–मार्केटिंग (46), ई–कॉमर्स (48), नेतृत्व एवं विकास (51), सुशासन (53), नौकरशाही (55), जनजातीय विकास (57), राष्ट्रवाद एवं राष्ट्रीय एकता (64), सामुदायिक जीवन (69), सामाजिक सरोकार (74), नवीनीकरणीय ऊर्जा (75), सतत् विकास लक्ष्य (81), मादक पदार्थों का सेवन एवं दुष्प्रभाव (84), घरेलू हिंसा (87), बाह्य एवं आंतरिक सुरक्षा के मुद्दे (90), व्यवसायगत सरलता आदि । (लगभग 1000 शब्दों में)	1-156
2. द्वितीय निबंध – समसामायिक समस्याएँ एवं निदान (लगभग 500 शब्दों में)	
3. प्रारूप लेखन – शासकीय व अर्द्धशासकीय पत्र (106), परिपत्र (सर्क्यूलर) (123), प्रपत्र (131), विज्ञापन (133), आदेश (134), पृष्ठांकन (137), अनुस्मारक (स्मरण पत्र) (139), प्रतिवेदन (रिपोर्ट राइटिंग) (144), अधिसूचना (नोटिफिकेशन) (148), टिप्पण लेखन (152) आदि। (लगभग– 250 शब्द –(कोई दो)	

MPPSC Mains Paper 6

पर्यावरण निबंध

प्रस्तावना

मनुष्य की प्रकृति पर निर्भरता आदि काल से ही चली आ रही है, इसलिए विश्व की प्रत्येक सभ्यता में प्रकृति की पूजा का प्रावधान है वैदिक काल में प्रकृति के विभिन्न अंगों भूमि, पर्वत, वृक्ष, नदी, जीव–जंतु आदि की पूजा की जाती थी। प्रकृति के प्रति मनुष्य की इस असीम श्रद्धा के कारण पर्यावरण स्वतः सुरक्षित था।

विकास की अंधी दौड़ मे मनुष्य ने प्रकृति को अत्यधिक नुकसान पहुँचाना शुरू कर दिया। एक सीमा तक प्रकृति उस नुकसान की भरपाई स्वयं कर सकती थी, लेकिन जब उसकी स्वतः पूर्ति की सीमा समाप्त हो गई तो पर्यावरण असंतुलित हो गया। आज का मनुष्य लालच के वशीभूत होकर प्रकृति का क्रूर दोहन कर रहा है। इसकी अति–उपभोगवादी प्रवृत्ति के कारण प्रकृति को इतना नुकसान पहुँच चुका है कि प्रकृति की मूल संरचना ही विकृत हो गई है।

प्रकृति के साथ सहजीव व सह–अस्तित्व की बात करने वाला मनुष्य कालान्तर मे यह सोचने लगा कि यह पृथ्वी केवल उसके लिए ही है; वह इस पर जैसे चाहे वैसे रहे। अपनी इस नवीन सोच के कारण प्रकृति को पूजा व सम्मान की नहीं अपितु उपभोग की एक वस्तु के रूप में देखने लगा। इसके विचारों मे आये इस परिवर्तन ने ही पर्यावरण असंतुलन का आधार तैयार किया।

पर्यावरण के असंतुलन के लिए अनके कारण उत्तरदायी है। लेकिन वे सभी कहीं न कहीं हमारी अनियोजित व अदूरदर्शी अर्थनीति से जुड़े हुये है। आज का मनुष्य अपनी आर्थिक उन्नति के लिए 'कोई भी कीमत' देने को तैयार है। उस ''कोई भी कीमत'' की सबसे बड़ी कीमत प्रकृति को ही देनी पड़ती है। भारी औद्योगीकरण आज विकास का पर्यावाची बन गया है। इन बड़े उद्योगों की स्थापना से लेकर इनके संचालन तक प्रत्येक स्तर पर पर्यावरण को नुकसान पहुँचता है। इन औद्योगिक इकाईयों के निर्माण के लिए वनों की कटाई भी जाती है। उत्पादन के प्रक्रम मे इनसे विभिन्न हानिकारक अपशिष्टों का उत्सर्जन होता है। ये पर्यावरण को नुकसान पहुँचाने वाले प्रमुख कारक है। परिवहन के विकास ने खनिज तेलों के उपभोग को बहुत बढ़ा दिया है। इनके ज्वलन SO_2, CO_2, CO से आदि जैसी हानिकारण गैसें निकलती हैं जो वायु प्रदूषण को फैला रही है । कृषि में भी रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों का उपयोग बढ़ता जा रहा है। ये सब तात्कालिक रूप से लाभप्रद दिखते हैं लेकिन दीर्घकाल मे इनक दुष्परिणाम बहुत ही भयानक होते है। इसी प्रकार अन्य विकासात्मक कार्य, जैसे– सड़क निर्माण, बाँध, रेलवे, खनन आदि भी पर्यावरणीय नुकसान में अपना योगदान करते हैं, साथ ही कुछ परम्परागत कारण जैसे– वनों का दोहन, अवैध कटाई आदि, भी पर्यावरण संतुलन को बिगाड़ते है।

वर्तमान मे आर्थिक विकास की होड़ में विश्व के सभी राष्ट्र अपने औद्योगिक विकास को हर कीमत पर जारी रखना चाहते है। इसके लिए वे पर्यावरण के लिए अपनी जिम्मेदारियों की उपेक्षा करने लगे हैं। विकसित राष्ट्र अपने दायित्वों को स्वीकार न करते हुऐ सारा दोष विकासशील राष्ट्रों पर डाल देते हैं। वहीं विकासशील देश अपनी विकास की मजबूरियों का हवाला देते है। इन कारणों से पर्यावरण संरक्षण के लिए अंतर्राष्ट्रीय चिताएँ तो व्यक्त की जाती है लेकिन कोई ठोस पहल नहीं हो पाती है। इसके उदाहरण के रूप में देखा जा सकता है कि अमेरिका क्योटो संधि में शामिल नहीं हुआ है। यदि विश्व का सबसे सम्पन्न राष्ट्र ही किसी ऐसे प्रयास का हिस्सा नहीं है तो उसकी सफलता स्वतः संदिग्ध हो जाती है।

यह समझने की आवश्यकता है कि मनुष्य को पर्यावरण की रक्षा के लिए अपनी विकासात्मक गतिविधियों को रोकना जरूरी नहीं है। लेकिन इतना जरूरी है कि हमे पर्यावरण की कीमत पर विकास नही करना चाहिए, क्योंकि विकास से अभिप्राय समग्र विकास होता है। केवल आर्थिक उन्नति नहीं यदि हम मात्र इतना ध्यान रखें। पेड़–पौधों, नदियाँ, तालाब, वन्य–जीव हमसे पिछली पीढ़ी तक सुरक्षित पहुँचाया है अतः हमारा दायित्व है कि हम इसे अपनी आने वाली पीढ़ी तक सुरक्षित पहुँचाएं। केवल इतना करने से ही विकास के नाम पर पर्यावरण को होने वाली क्षति सामप्त हो जायेगी। यही सतत् विकास की संकल्पना का आधार है।

पर्यावरण असंतुलन से उत्पन्न समस्याएँ

पिछले कुछ दशकों से पर्यावरण असंतुलन की स्थिति बहुत ही भयावह हो गई हैं प्रकृति के साथ सदियों से चली आ रही क्रूरता के दुष्परिणाम अब सामने आने लगे हैं ग्लेशियरों का पिघलना, अरब के रेगिस्तानों में भारी वर्षा, ओजोन परत में छिद्र, बाढ़ भूकम्प, अम्ल वर्षा, सदानीरा नदियों का सूखना, फसल चक्र का प्रभावित होना, जैव–विविधता में तीव्र गति से ह्रास होना आदि असंतुलित पर्यावरण की ही अभिव्यक्ति है। इंटर गवर्नमेंटल पैनल ऑन क्लाइमेट चेंज ने अपनी रिपोर्ट में बहुत ही गंभीर आशंकाएँ व्यक्त की है। उसके अनुसार पर्यावरण असंतुलन से वैश्विक तापन की स्थिति उत्पन्न हो रही है। इससे समुद्र का तल बढ़ेगा, जिससे बहुत से छोटे द्वीप डूब जायेंगे, तटवर्ती शहरों मे पानी भर जायेगा, मूँगे आदि की चट्टानें विलुप्त हो जायेंगी।

सभ्यता और संस्कृति की अवधारणा

संस्कृति (CULTURE)

मानव इसलिए मानव है कि उसके पास संस्कृति है। संस्कृति के अभाव में मानव को पशु से श्रेष्ठ नहीं माना जा सकता। संस्कृति ही मानव की श्रेष्ठतम धरोहर है जिसकी सहायता से मानव पीढ़ी–दर–पीढ़ी आगे बढ़ता जा रहा है, प्रगति की ओर उन्मुख होता जा रहा है। यदि मानव से उसकी संस्कृति छीन ली जाये तो जो कुछ शेष बचेगा, वह मात्र अन्य पशुओं के समान एक प्राणी ही। मानव और पशु में मुख्य अंतर संस्कृति का ही तो है। संस्कृति मानव जीवन की एक अनोखी घटना है। संस्कृति के आधार पर ही हम एक व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति से, एक समूह को दूसरे समूह से और एक समाज को दूसरे समाज से से पृथक् कर सकते हैं। मानव ही विश्व में एक ऐसा प्राणी है जो अपनी शारीरिक एवं बौद्धिक विशेषताओं के कारण संस्कृति का निर्माण कर पाया है। भौतिक क्षेत्र में अनेक वस्तुओं को निर्मित कर पाया एवं अभौतिक क्षेत्र में अनेक विश्वासों तथा व्यवहार के तरीकों को जन्म दे पाया है।

मानव संस्कृति निर्माता के रूप में (MAN AS A CREATOR OF CULTURE)

मानव में ही वह अद्भुत शक्ति एवं क्षमता मौजूद है कि वह संस्कृति का निर्माता कहलाने का अधिकारी है। ये क्षमताएँ एवं शक्तियाँ मानव की अनोखी शारीरिक बनावट के कारण हैं। **लेस्ली ह्वाइट** ने मानव की उन पाँच विशेषताओं का उल्लेख किया है जिनके कारण मानव द्वारा संस्कृति का निर्माण संभव हुआ है।

(1) सीधे खड़े हो सकने की क्षमता – मानव ही एकमात्र ऐसा प्राणी है कि वह सीधा खड़ा हो सकता है, वह अपने दो पाँवों से चलने–फिरने का काम लेता है तथा हाथों की सहायता से अन्य कार्य कर सकता है। अन्य प्राणी अपने इन चारों अंगों से चलने एवं शरीर का भार संभालने का कार्य करते हैं।

(2) स्वतन्त्रतापूर्वक घुमाये जा सकने वाले हाथ – मानव के हाथों की बनावट विशेष प्रकार की है, इस कारण उन्हें किसी भी दिशा में असानी से घुमाया जा सकता है। हाथ की बनावट में अँगूठे की विशिष्ट स्थिति होने के कारण किसी भी वस्तु को पकड़ना सरल हो जाता है। अन्य प्राणियों के हाथों में अँगुलियों और अँगूठे का यह तालमेल नहीं है। यही कारण है कि मानव अपने हाथों द्वारा अनोखे निर्माण कार्य कर सका है। उसने अनेक यंत्रों, कल–कारखानों, सड़कों, भवनों एवं कलाकृतियों का निर्माण किया है। लेखन कार्य हाथों की विशिष्ट संरचना के कारण ही संभव हुआ है जिसके परिणामस्वरूप उसने मानव ज्ञान को संजोया है और न केवल उसे सुरक्षित ही रखा है वरन् उसे बढ़ाया भी है।

(3) तीक्ष्ण एवं केंद्रित की जा सकने वाली दृष्टि – मानव किसी भी वस्तु को टकटकी लगाकर लम्बे समय तक देख सकता है। इसके परिणामस्वरूप उसके द्वारा अवलोकन का कार्य सम्भव हो सका है। इस अवलोकन के आधार पर ही उसने ज्ञान एवं विज्ञान का विकास किया, प्राकृतिक एवं सामाजिक घटनाओं को देखा, निष्कर्ष निकाले और सिद्धांतों का निर्माण किया।

(4) मेधावी मस्तिष्क – मानव की सबसे बड़ी क्षमता उसके मेधावी मस्तिष्क में निहित है। उसका मस्तिष्क अन्य प्राणियों की तुलना में कहीं अधिक तर्कशील, विचारशील एवं क्रियाशील है। मानव अपने मेधावी मस्तिष्क के कारण ही अनेक आविष्कार कर पाया है। कुछ विद्वानों की मान्यता है। कि मानव मस्तिष्क एवं पशु मस्तिष्क में केवल मात्रा का अंतर है, प्रकार का नहीं। इस प्रकार के विचार रखने वालों में किंग्सले डेविस, डार्विन एवं लिंटन, आदि प्रमुख हैं। डार्विन का तो मत है कि मानसिक क्षमताओं में मानव और उच्चकोटि के स्तनधारी प्राणियों मे कोई आधारभूत अंतर नहीं है, किंतु इस मत को स्वीकार नहीं किया जा सकता क्योंकि यह मात्रा का अंतर ही होता तो पशु भी कभी–न–कभी संस्कृ ति का निर्माण कर ही सकते थे। अतः मानव एवं पशुओं के मस्तिष्क में मात्रा का ही नहीं अपितु प्रकार का भी अंतर है। इस अंतर के कारण ही मानव तर्क कर सकता है और कार्यकारण संबंध ज्ञात कर सकता है। इसी आधार पर मानव ने संस्कृति का विकास किया है।

(5) प्रतीकों के निर्माण की क्षमता – मानव द्वारा संस्कृति निर्माण को संभव बनाने में उसके द्वारा उपयोग किये जाने वाले प्रतीकों एवं भाषा का भी अमूल्य योगदान रहा है। भाषा एवं प्रतीकों के माध्यम से वह अपने विचारों का सरलता से आदान–प्रदान कर सकता है तथा पुरानी पीढ़ी द्वारा नयी पीढ़ी को ज्ञान का हस्तान्तरण भी। मानव ही प्रतीकों को अर्थ प्रदान कर सकता है और इसी आधार पर उसने भाषा का विकास किया है। मानव एवं पशु जगत में एक मुख्य भेद यह भी है कि केवल मानव के पास ही भाषा है जबकि पशुओं के पास नहीं। भाषा के द्वारा ही वह संस्कृति का विकास, संशोधन परिमार्जन एवं विस्तार कर सकता है।

संस्कृति का अर्थ (MEANING OF CULTURE)

संस्कृति शब्द का प्रयोग अनेक अर्थों में किया गया है। **क्रोबर** एवं **क्लूखौन** ने संस्कृति की परिभाषाओं का संकलन कर

बताया है कि इस शब्द की एक–सौ आठ परिभाषाएँ हैं। साहित्यकारों ने सामाजिक आकर्षण एवं बौद्धिक श्रेष्ठता को प्रकट करने के लिए संस्कृति शब्द का प्रयोग किया है। प्रसिद्ध आलोचक एवं कवि मैथ्यू आरनोल्ड जीवन के प्रकाश एवं कोमलता को संस्कृति कहते हैं। कई समाजशास्त्रियों ने समाज के बौद्धिक नेताओं के लिए 'सांस्कृतिक अभिजात' (Culture elite) शब्द का प्रयोग किया है। दार्शनिक केसिरर एवं सोरोकिन तथा मैकाइवर जैसे समाजशास्त्री मानव की नैतिक, आध्यात्मिक और बौद्धिक उपलब्धियों के लिए संस्कृति शब्द का प्रयोग करते हैं।

संस्कृति शब्द संस्कृत भाषा से लिया गया है। संस्कृत और संस्कृति दोनों ही शब्द 'संस्कार' से बने है। संस्कार का अर्थ है कुछ कृत्यों (rituals) की पूर्ति करना। एक हिंदू जन्म से ही अनेक प्रकार के संस्कार करता है, जिनमें उसे विभिन्न प्रकार की भूमिकाएँ निभानी पड़ती है। संस्कृति का अर्थ होता है विभिन्न संस्कारों के द्वारा सामूहिक जीवन के उद्देश्यों की प्राप्ति। यह परिमार्जन की एक प्रक्रिया है। संस्कारों को सम्पन्न करके ही एक मानव सामाजिक प्राणी बनता है।

संस्कृति का नीतिशास्त्रीय अर्थ

नैतिक दृष्टि से संस्कृति का संबंध नैतिकता, सच्चाई, ईमानदारी, आदर्श नियमों एवं सद्गुणों से है। संस्कृति का संबंध 'सत्यम् शिवम् सुंदरम्' (The Truth, The God, The Beauty) से है। हीगल, काण्ट एवं लॉबेल, आदि में संस्कृति का नीतिशास्त्रीय अर्थ में प्रयोग किया है। इस अर्थ में संस्कृति का संबंध उन वस्तुओं से है जो मानव जीवन को आनंद प्रदान करती है, जो सुंदर है, जो ज्ञान से संबंधित है, जो सत्य है और जो मानव के लिए कल्याणकारी एवं मूल्यवान है नीतिशास्त्र में संस्कृति शब्द का प्रयोग धार्मिक एवं नैतिक गुणों से युक्त आचरण के लिए किया जाता है।

संस्कृति का ऐतिहासिक अर्थ

इतिहासकार संस्कृति शब्द का प्रयोग मानव समाज एवं समूह की उन्नत अवस्था के लिए करते है। मानव ने प्राचीन काल से ही अपनी उन्नति एवं प्रगति के लिए प्रयास किया है, जिसके फलस्वरूप अनेक उपलब्धियाँ भी हासिल की हैं। धर्म, ज्ञान, विज्ञान, कला, संगीत, दर्शन एवं साहित्य के क्षेत्र में मानव की उपलब्धियों को इतिहासकार संस्कृति की श्रेणी में रखते हैं और मानव की ऐतिहासिक उपलब्धियों को सांस्कृतिक इतिहास के नाम से जाना जाता है।

संस्कृति का मानवशास्त्रीय अर्थ

मानवशास्त्र में संस्कृति शब्द का प्रयोग भिन्न अर्थों में हुआ है। **मजूमदार** एवं **मदान** लोगों के जीने के ढंग को ही संस्कृति मानते हैं। प्रारंभिक मानवशास्त्रियों में **टायलर** की परिभाषा विस्तृत है। आपके अनुसार, ''संस्कृति वह समग्र जटिलता (Complex whole) है जिसमें ज्ञान, विश्वास, कला, आचार, कानून तथा और ऐसी ही अन्य क्षमताओं एवं आदतों का समावेश है जो मनुष्य समाज का एक सदस्य होने के नाते प्राप्त करता है।'' टायलर की इस परिभाषा में यह स्पष्ट किया गया है कि संस्कृति सामाजिक विरासत है, समाज द्वारा मानव को दिया हुआ उपहार है। टायलर की परिभाषा की व्याख्या करते हुए मैलिनोवस्की कहते हैं कि सामाजिक विरासत को हम भौतिक और अभौतिक या मूर्त या अमूर्त भागों में बाँट सकते हैं।

दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि संस्कृति जीवन की सम्पूर्ण विधि (total way of life) है तथा मानसिक, सामाजिक एवं भौतिक साधन है जिससे कि जीवन की वह विधि बनी हुई है।

पिडिंगटन के अनुसार, '' संस्कृति उस भौतिक तथा बौद्धिक साधनों और उपकरणों का सम्पूर्ण योग है जिनके द्वारा मानव अपनी प्राणीशास्त्रीय तथा सामाजिक आवश्यकताओं की संतुष्टि तथा अपने पर्यावरण से अनुकूलन करता है।''

हरस्कोविट्स संस्कृति को ''पर्यावरण का मानव निर्मित (man – made) भाग कहते हैं।''

इस परिभाषा से स्पष्ट है कि पर्यावरण दो प्रकार के हैं –एक प्राकृतिक या ईश्वर प्रदत्त एवं दूसरा मानव द्वारा निर्मित। वे सारी भौतिक और अभौतिक वस्तुएँ जो मानव निर्मित हैं; जैसे टेबल, कुर्सी, कपड़ा, विज्ञान, दर्शन, धर्म, प्रथाएँ, नियम एवं हजारों अन्य वस्तुएँ, आदि संस्कृति के अंतर्गत आती है।

हॉबल के अनुसार, ''संस्कृति सीखे हुए व्यवहार प्रतिमानों का कुल योग है जो किसी समाज के सदस्यों की विशेषता है जो प्राणीशास्त्रीय विरासत का परिणाम नहीं है।''

हॉबल की इस परिभाषा से स्पष्ट है कि संस्कृति सीखी जाती है। अतः वह एक पीढ़ी के द्वारा दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित की जाती है। वे संस्कृति को मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति का साधन मानते हैं।

मैलिनोवस्की के अनुसार संस्कृति जीवन व्यतीत करने की एक सम्पूर्ण विधि (total way of life) है, जो कि व्यक्ति की शारीरिक, मानसिक एवं अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति करती है और उसे प्रकृति के बन्धनों से मुक्त करती है।

डॉ. दुबे के अनुसार, ''सीखे हुए व्यवहार प्रकारों की उस समग्रता को जो किसी समूह को वैशिष्टय प्रदान करती है, संस्कृति की संज्ञा दी जा सकती है, दूसरे शब्दों में किसी समूह के ऐतिहासिक विकास में जीवनयापन के जो विशिष्ट स्वरूप विकसित हो जाते हैं, वे ही उस समूह की संस्कृति हैं।''

लिंटन संस्कृति को परिभाषित करते हुए लिखते हैं, '' संस्कृति ज्ञान, धारणाएँ एवं प्राकृतिक व्यवहार के प्रतिमानों का कुल योग है जिसके सभी भागीदार होते हैं तथा जो हस्तान्तरित की जाती है।''

लोवी (Lowie) ''सम्पूर्ण सामाजिक परम्परा'' (Whole of social tradition) को संस्कृति कहते हैं।''

क्लूखौन संस्कृति को विचारने, अनुभव करने एवं क्रिया करने की एक विधि मानते हैं।

संस्कृति का समाजशास्त्रीय अर्थ

समाजशास्त्रीय अर्थ में संस्कृति को समाज की धरोहर या विरासत के रूप में परिभाषित किया गया है। समाज द्वारा निर्मित भौतिक एवं अभौतिक दोनो पक्षों को संस्कृति में सम्मिलित करते हुए **रॉबर्ट बीरस्टीड** लिखते हैं, ''संस्कृति वह सम्पूर्ण

जटिलता है जिसमें वे सभी वस्तुएँ सम्मिलित हैं जिन पर हम विचार करते हैं, कार्य करते हैं और समाज के सदस्य होने के नाते अपने पास रखते हैं।''

वे पुनः लिखते हैं, ''इसके अंतर्गत हम जीवन जीने, कार्य करने एवं विचार करने के उन सभी तरीकों को सम्मिलित करते हैं, जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित होते हैं और समाज के स्वीकृत अंग (accepted parts of Society) बन चुके हैं।''

लैंडिस के अनुसार, ''संस्कृति वह संसार है जिसमें एक व्यक्ति जन्म से लेकर मृत्यु तक निवास करता है, चलता–फिरता है और अस्तित्व को बनाये रखता है।''

ब्रूम एवं **सेल्जनिक,** '' संस्कृति को सामाजिक विरासत के रूप में स्वीकार करते हैं।''

टॉलकॉट पारसंस ने अपनी पुस्तक 'The Social System' में संस्कृति को एक ऐसे पर्यावरण के रूप में परिभाषित किया है जो मानव क्रियाओं के निर्माण में मौलिक है, इसका तात्पर्य है कि संस्कृति मानव के व्यक्तित्व एवं क्रियाओं का निर्धारण करती है। **मैकाइवर** एवं **पेज** ने संस्कृति की परिभाषा सभ्यता एवं संस्कृति के भेद को प्रकट करने के दौरान की है। वे लिखते हैं ''यह (संस्कृति) मूल्यों, शैलियों, भावात्मक लगावों, बौद्धिक अभियानों का संसार है। इसलिए संस्कृति सभ्यता का प्रतिवाद (anti thesis) है। यह (संस्कृति) हमारे रहने और सोचने के ढंगों, कार्यकलापों, कला, साहित्य, धर्म, मनोरंजन एवं आनंद में हमारी प्रकृति की अभिव्यक्ति है।''

संस्कृति की विशेषताएँ (CHARACTERISTICS OF CULTURE)

(1) संस्कृति मानव निर्मित – संस्कृति केवल मनुष्य समाज में ही पायी जाती है। मनुष्य में कुछ ऐसी मानसिक एवं शारीरिक विशेषताएँ है; जैसे विकसित मस्तिष्क, केन्द्रित की जा सकने वाली आँखें, हाथ और उसमें अँगूठे की स्थिति, गर्दन की रचना, आदि जो उसे अन्य प्राणियों से भिन्न बनाती है और इसी कारण वह संस्कृति को निर्मित एवं विकसित कर सका है और अपने विकसित मस्तिष्क के कारण ही मानव नये–नये आविष्कार करता है और उन्हें मानव–जाति के अनुभवों में संजोता है। संस्कृति का धनी होने के कारण ही मनुष्य अन्य प्राणियों से श्रेष्ठ है और वह अति–प्राणी (Super-Organic) कहलाने का अधिकारी है।

(2) संस्कृति सीखी जाती है – हॉबल कहते हैं कि संस्कृति सीखा हुआ व्यवहार है। संस्कृति मनुष्य को अपने माता–पिता द्वारा उसी प्रकार वंशानुक्रमण से प्राप्त नहीं होती, जिस प्रकार से शरीर रचना प्राप्त होती है। संस्कृति मानव के सीखे हुए व्यवहार प्रतिमानों (behavious patterns) का योग है। एक मनुष्य अपने जन्म से साथ किसी संस्कृति को लेकर पैदा नहीं होता वरन् जिस समाज में पैदा होता है, उसकी संस्कृति को धीरे–धीरे समाजीकरण की प्रक्रिया द्वारा सीखता है। सीखने की क्षमता मानव में ही नही वरन् पशुओं में भी होती है, किंतु पशु द्वारा सीखा हुआ व्यवहार संस्कृति नहीं बन पाता। पशु द्वारा सीखा हुआ व्यवहार मानव की तरह सामूहिक व्यवहार का अंग नहीं है अपितु केवल पशु का व्यक्तिगत व्यवहार है। सामूहिक व्यवहार की प्रथाओं, जनरीतियों, परंपराओं, रूढ़ियों आदि को जन्म देते हैं और ये केवल मानव समाज में ही पाये जाते है, पशुओं में नहीं।

(3) संस्कृति हस्तांतरित की जाती है – संस्कृति चूँकि सीखी जा सकती है इसलिए ही नयी पीढ़ी पुरानी पीढ़ी के द्वारा संस्कृति का ज्ञान प्राप्त करती हैं। इस प्रकार एक समूह से दूसरे समूह को, एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को संस्कृति हस्तांतरित की जाती है। मानव को अन्य प्राणियों से श्रेष्ठ घोषित करने में उसकी भाषा का भी महत्वपूर्ण हाथ है। भाषा के कारण ही वह अपने ज्ञान को दूसरे लोगों तक पहुँचाता है। वह अपने द्वारा अर्जित ज्ञान को नयी पीढ़ी को भाषा, लेखन एवं संकेतों के माध्यम से हस्तांतरित करता है। नयी पीढ़ी को अपने पूर्वजों द्वारा अर्जित ज्ञान का भण्डार प्राप्त होता है जिसमें वे स्वयं का अनुभव भी जोड़ते जाते हैं। इस प्रकार से मानव ज्ञान एवं संस्कृति का कोष दिनों–दिन बढ़ता जाता है।

(4) प्रत्येक समाज की एक विशिष्ट संस्कृति होती है – एक समाज की भौगोलिक एवं सामाजिक परिस्थितियाँ दूसरे समाज से भिन्न होती है। अतः प्रत्येक समाज में अपनी एक विशिष्ट संस्कृति पायी जाती है। समाज अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अनेक आविष्कार करता है। आविष्कारों का योग संस्कृति को एक नया रूप प्रदान करता है। हर समाज की आवश्यकताएँ भी भिन्न–भिन्न होती हैं जो संस्कृति भिन्नताओं को जन्म देती है। एक समाज की संस्कृति में घटित होने वाले परिवर्तन दूसरी संस्कृति में घटित होने वाले परिवर्तनों से भिन्न होते है।

(5) संस्कृति में सामाजिक गुण निहित होता है – संस्कृति किसी व्यक्ति विशेष की देन नहीं होती वरन् सम्पूर्ण समाज की देन है। उसका जन्म और विकास समाज के कारण ही हुआ है। समाज के अभाव में संस्कृति की कल्पना नहीं की जा सकती। कोई भी संस्कृति पाँच, दस या सौ, दो सौ व्यक्तियों का प्रतिनिधित्व नहीं करती वरन् समाज या समूह के अधिकांश लोगों का प्रतिनिधित्व करती है। संस्कृति सामूहिक आदतों, व्यवहारों एवं अनुभवों की ही उपज होती है। संस्कृति के अंग जैसे प्रथाएँ, जनरीतियाँ, भाषा, परम्परा, धर्म, विज्ञान, कला, दर्शन, आदि किसी एक व्यक्ति की विशेषताओं को प्रकट नहीं करते वरन् सम्पूर्ण समाज की जीवन विधि (Way of life) का प्रतिनिधित्व करते हैं।

(6) संस्कृति समूह के लिए आदर्श होती है – एक समूह के लोग अपनी संस्कृति को आदर्श मानते हैं और वे उसके अनुसार अपने व्यवहारों एवं विचारों को ढालते हैं। जब संस्कृतियों की तुलना की जाती है तो एक व्यक्ति दुसरी संस्कृ

ति की तुलना में अपनी संस्कृति को आदर्श बताने का प्रयास करता है, उसकी अच्छाईयों का उल्लेख करता है। उदाहरणार्थ, हिंदू संस्कृति की तुलना में मुस्लिम संस्कृति से करने के दौरान एक हिन्दू अपनी संस्कृति को ही श्रेष्ठ बताता है।

(7) संस्कृति मानव आवश्यकताओं की पूर्ति करती है – संस्कृति की यह विशेषता है कि वह मानव की आवश्यकताओं की पूर्ति करती है। मानव की अनेक सामाजिक, शारीरिक एवं मानसिक आवश्यकताएँ हैं। उनकी पूर्ति के लिए ही मानव ने संस्कृति का निर्माण किया है। प्रकार्यवादियों ने संस्कृति के प्रकार्यों (Functions) पर अधिक बल दिया है। प्रकार्यवादियों मे मैलिनोवस्की एवं रैडक्लिफ ब्राउन का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

(8) संस्कृति में अनुकूलन करने की क्षमता होती है– संस्कृति में समय, स्थान, समाज एवं परिस्थितियों के अनुरूप अपने आपकों ढालने की क्षमता होती है। परिवर्तनशीलता संस्कृति का गुण है। विभिन्न भौगोलिक परिस्थितियों के अनुसार संस्कृति अपने आपको बदलती रहती है। पहाड़ी भागों, मैदानों, रेगिस्तान एवं बर्फीले प्रदेशों में निवास करने वाले लोगों की संस्कृति में पर्याप्त अंतर पाये जाते हैं। इसका कारण यह है कि संस्कृति ने अपने आपको भौगोलिक परिस्थितियों के अनुरूप ही ढाला है। शीत प्रदेशों मे रहने वाले लोगों के मकान एवं वस्त्रों की बनावट उष्ण प्रदेशों मे रहने वालों से भिन्न होती है। संस्कृति में परिवर्तनशीलता एवं अनुकूलता का गुण देखा जा सकता है। भारत में वर्तमान समय की संस्कृति वैदिक युग से भिन्न है क्योंकि समय के साथ–साथ संस्कृति ने अपने को बदला है।

(9) संस्कृति में संतुलन एवं संगठन होता है – संस्कृति का निर्माण विभिन्न इकाइयों से मिलकर होता है। सांस्कृतिक इकाइयाँ जिन्हें हम संस्कृति तत्व (Culture trait) एवं संस्कृति संकुल (Culture complex) कहते हैं, परस्पर एक–दूसरे से पृथक् नहीं हैं वरन् एक–दूसरे से बँधे हुए हैं। ये सभी ईकाइयाँ संगठित रूप से मिलकर ही संपूर्ण संस्कृति की व्यवस्था को बनाये रखती है। **समनर** का मत है कि संस्कृति की विभिन्न ईकाइयों में ''एकरूपता की ओर खिंचवा'' होता है जिसके परिणामस्वरूप सभी ईकाइयाँ संगठित होकर एक सामूहिकता या समग्रता का निर्माण करती है, उसे ही संस्कृति कहते है। लघु समाजों में संस्कृति के विभिन्न पक्षों में एकता स्पष्टतः देखी जा सकती है क्योंकि वहाँ संस्कृति में तनाव एवं संघर्ष पैदा करने वाली शक्तियाँ अधिक क्रियाशील नहीं होतीं।

(10) संस्कृति मानव–व्यक्तित्व के निर्माण में मौलिक होती है – एक मनुष्य का पालन–पोषण किसी संस्कृति पर्यावरण में ही होता है। जन्म के बाद बच्चा अपनी संस्कृति को सीखकर उसे आत्मसात करता है। एक संस्कृति में पले हुए व्यक्ति का व्यक्तित्व दूसरी संस्कृति के व्यक्ति से भिन्न होता है। इसका कारण यह है कि संस्कृति में प्रचलित रीति–रिवाजों, धर्म, दर्शन, कला, विज्ञान, प्रथाओं एवं व्यवहारों की छाप व्यक्ति के व्यक्तित्व पर होती है। यही कारण है कि भारतीय संस्कृति में पला हुआ व्यक्ति जापानी संस्कृति में पले हुए व्यक्ति से भिन्न होता है।

(11) संस्कृति अधि–वैयक्तिक एवं अधि–सावयवी है (Culture is both super individual and super organic) – कोबर ने संस्कृति की इन विशेषताओं का उल्लेख किया है अधि–वैयक्ति का अर्थ है कि संस्कृति का निर्माण किसी व्यक्ति विशेष ने नही किया है और वह संस्कृति के एक भाग का ही उपयोग कर पाता है, संपूर्ण का नहीं। संस्कृति का निर्माण समूह द्वारा ही होता है। कभी–कभी समाज में कुछ महान सामजिक कार्यकर्त्ता, वैज्ञानिक एवं नेता आदि पैदा होते हैं। वे समाज और संस्कृति के पुरातन मूल्यों, विचारों, प्रथाओं, धर्म, आदि में अनेक परिवर्तन लाते हैं और उनके स्थान पर नवीन मूल्य, विचारों प्रथाओं एवं धर्म की स्थापना करते हैं। तब ऐसा प्रतीत होता है जैसे वे ही सम्पूर्ण संस्कृति के वाहक एवं निर्माता हैं, किंतु यह विचार भी त्रुटिपूर्ण है, क्योंकि इन महान व्यक्तियों ने जो विचार ग्रहण किये, वे भी उनसे पूर्व समाज में विद्यमान थे। अतः कोई भी व्यक्ति संपूर्ण संस्कृति का निर्माता नहीं हो सकता। यह केवल अपनी ओर से उसमें कुछ योगदान ही देता है। प्रत्येक संस्कृति का निर्माण, विकास, विस्तार एवं परिमार्जन होता रहता है, जिसे रोकने या वश में करने की क्षमता किसी व्यक्ति विशेष में नहीं होती है। इस अर्थ में भी संस्कृति अधि–वैयक्तिक है।

भौतिक तथा अभौतिक संस्कृति (MATERIAL AND NON –MATERIAL CULTURE)

अमेरीकन समाजशस्त्री ऑगबर्न ने संस्कृति को भौतिक और अभौतिक दो भागों में बाँटा है। उनके इस वर्गीकरण को अन्य वैज्ञानिकों ने भी स्वीकार किया है–

1. भौतिक संस्कृति (Material Culture)

भौतिक संस्कृति के अंतर्गत मानव द्वारा निर्मित सभी भौतिक एवं मूर्त वस्तुओं को सम्मिलित किया जाता है, जिन्हें हम देख सकते हैं, छू सकते हैं और इंद्रियों द्वारा जिनका आभास कर सकते हैं। भौतिक संस्कृति में हम घड़ी, पेन, पंखा, मोटर, मशीन, औजार, वस्त्र, वाद्य–यंत्र, रेल, जहाज, वायुयान, टेलीफोन, आदि अनेक वस्तुओं को गिन सकते हैं। भौतिक संस्कृति के सभी तत्वों को गिनना सरल नहीं है। सरल एवं आदिम समाजों की अपेक्षा जटिल एवं आधुनिक समाजों में इनकी संख्या अधिक है। इसी प्रकार से पुरानी पीढ़ी की अपेक्षा नयी पीढ़ी के पास भौतिक संस्कृति अधिक है।

भौतिक संस्कृति की विशेषताएँ–

(i) भौतिक संस्कृति मूर्त होती है।

(ii) भौतिक संस्कृति संचयी है, अतः इसके अंगों में निरंतर वृद्धि होती जाती है।
(iii) चूँकि भौतिक संस्कृति मूर्त है, अतः उसे मापा जा सकता है।
(iv) भौतिक संस्कृति की उपयोगिता एवं लाभ का मूल्यांकन सरल है।
(v) भौतिक संस्कृति में परिवर्तन शीघ्र होते हैं।
(vi) एक स्थान से दूसरे स्थान पर संस्कृति का प्रसार होने पर भौतिक संस्कृति में बिना परिवर्तन हुए ही उसे ग्रहण किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, अमेरीकन फर्नीचर की डिजाइन, पेन, वेश–भूषा एवं मशीनों को हम बिना परिवर्तन के ज्यों का त्यों ग्रहण कर सकते हैं।

2. अभौतिक संस्कृति (Non –Material Cultures)

मैकाइवर एवं अन्य कई समाज–वैज्ञानिकों ने संस्कृति में केवल अभौतिक तत्वों को ही सम्मिलित किया है। सोरोकिन इसे भावात्मक संस्कृति कहते हैं। अभौतिक संस्कृति के अंतर्गत उन सभी सामाजिक तथ्यों को सम्मिलित किया जाता है जो अमूर्त है, जिनका कोई माप तौल, आकार व रंग–रूप नहीं होता, इंद्रियों द्वारा जिनका स्पर्श नहीं होता वरन् जिन्हें हम केवल महसूस कर सकते हैं, वह हमारे विचारों एवं कार्यों में निहित है। सामान्यतः अभौतिक संस्कृति में हम सामाजिक विरासत में प्राप्त विचार, विश्वास, मानदण्ड, व्यवहार प्रथा, रीति–रिवाज–कानून, मनोवृत्तियाँ, साहित्य, ज्ञान, कला, भाषा, नैतिकता, आदि को सम्मिलित करते हैं। अभौतिक संस्कृति समाजीकरण एवं सीखने की प्रक्रिया द्वारा पीढ़ी–दर–पीढ़ी हस्तान्तरित होती है।

अभौतिक संस्कृति की विशेषताएँ –

(i) अभौतिक संस्कृति अमूर्त होती है।
(ii) चूँकि अभौतिक संस्कृति अमूर्त होती है, अतः उसकी माप नहीं की जा सकती।
(iii) अभौतिक संस्कृति–जटिल होती है।
(iv) अभौतिक संस्कृति की उपयोगिता एवं लाभ का मूल्यांकन भौतिक वस्तुओं की तरह प्रकट नहीं किया जा सकता है।
(v) अभौतिक संस्कृति में परिवर्तन बहुत कम और धीमी गति से होते हैं।
(vi) सांस्कृतिक प्रसार के दौरान अभौतिक संस्कृति के तत्वों को उसी रूप में ग्रहण नहीं किया जाता वरन् उनमें थोड़ा बहुत परिवर्तन आ जाता है।
(vii) अभौतिक संस्कृति का संबंध मानव के आध्यात्मिक एवं आंतरिक जीवन से है।

भौतिक व अभौतिक संस्कृति में अंतर
(DISTINCTION BETWEEN MATERIAL AND NON – MATERIAL CULTURE)

भौतिक एवं अभौतिक संस्कृति सम्पूर्ण संस्कृति के दो अंग है। इनमें निम्नांकित अंतर पाये जाते हैं –

1. अभौतिक संस्कृति **अमूर्त** होती है जबकि भौतिक संस्कृति **मूर्त** होती है।
2. अभौतिक संस्कृति भौतिक संस्कृति की अपेक्षा **धीमी गति** से परिवर्तित होती है, अतः वह भौतिक संस्कृति की अपेक्षा **स्थिर** होती है।
3. अभौतिक संस्कृति का संबंध मानव के **आंतरिक जीवन** से है जबकि भौतिक संस्कृति का संबंध **बाह्य जीवन** से।
4. अभौतिक संस्कृति में वृद्धि **धीमी गति** से होती है जबकि भौतिक संस्कृति में **तीव्र गति** से। उदाहरण के लिए, पिछले डेढ़ सौ वर्षों में कितने ही भौतिक आविष्कार हुए, कितने ही प्रकार की नई मशीनें एवं नयी वस्तुएँ बनी, जबकि हमारे विचारों, प्राथाओं, लोकरीतियों, आदि में कोई विशेष परिवर्तन नही हुआ है।
5. अभौतिक संस्कृति की अपेक्षा भौतिक संस्कृति **शीघ्र ग्राह्य** है। जब दो भिन्न संस्कृति समूह संपर्क में आते हैं तो एक–दूसरे की भौतिक संस्कृति शीघ्र स्वीकार कर ली जाती है, बजाय उनकी प्राथाओं एवं रीति–रिवाजों के।
6. भौतिक संस्कृति के मूर्त होने से उसका **सरलता से माप** किया जा सकता है, जबकि अभौतिक संस्कृति के अमूर्त होने से उसका **माप–तौल नहीं** किया जा सकता।
7. भौतिक संस्कृति **सरल** होती है, जबकि अभौतिक संस्कृति की प्रकृति **जटिल** है।
8. भौतिक संस्कृति **संचयी** होती है, आविष्कारों के कारण उसमें वृद्धि होती जाती है, अभौतिक संस्कृति में भौतिक के समान **संचय एवं वृद्धि नहीं होती है।**
9. भौतिक संस्कृति का **मूल्यांकन लाभ एवं उपयोगिता के आधार** पर किया जाता है, अभौतिक संस्कृति का **मूल्यांकन** भौतिक वस्तुओं की तरह **उपयोगिता से नहीं किया जा सकता** क्योंकि इसका संबंध मानव के आत्मिक पक्ष से है जिसे महसूस किया जा सकता है, किंतु मापा नही जा सकता ।

संस्कृति के लक्षण (ATTRICUTES OF CULTURE)

संस्कृति को समझने के लिए **मजूमदार** एवं **मदान** ने संस्कृति के कुछ लक्षणों का उल्लेख किया है, जो निम्नांकित है :–

1. **संस्कृति का ईथॉस और ईडॉस पक्ष (Ethos and Idos Aspect of Culture) –** मानवशास्त्री **क्रोबर** ने संस्कृति के दो पक्षों ईथॉस और ईडॉस का उल्लेख किया है। उनका मत है कि प्रत्येक संस्कृति का निर्माण इन दोनों पक्षों से मिलकर होता है। संस्कृति के निर्णायक तत्वों से उसका जो औपचारिक एवं बाह्य रूप प्रकट होता है, उसे ईडॉस (संमूर्तता) पक्ष

कहा जाता है। संस्कृति का एक दूसरा पक्ष भी होता है, जो उसके गुणों, प्रेरक मान्यताओं (Themes) या लय और उसकी अभिरूचियों को प्रभावित एवं निर्धारित करते हैं, इसे संस्कृति का **ईथॉस** (अमूर्त) पक्ष कहते है। **वाटसन** का भी मत है प्रत्येक संस्कृति को दो पक्षों में विभक्त किया जा सकता है। इनमें से ईथॉस कहा जाने वाला पक्ष वह है जिसकी रचना संस्कृति की भावात्मकता से होती है। ईडॉस कहे जाने वाले दूसरे पक्ष में संस्कृति के वे पक्ष आते हैं, जिनका ज्ञान इंद्रियों के माध्यम से किया जा सकता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रत्येक संस्कृति के दो पहलू होते हैं – एक बाह्य और औपचारिक स्वरूप जो हमें स्पष्ट दिखाई देता है और दूसरा बाह्य स्वरूप को निर्धारित करने वाला आंतरिक गुण एवं सिद्धांत। भारतीय संस्कृति का **ईथॉस** पक्ष (अमूर्त) आध्यात्मवाद है तो **ईडॉस** पक्ष (मूर्त) में जाति, वर्ण व्यवस्था, ग्राम पंचायत व्यवस्था, संयुक्त परिवार प्रथा, आदि आते हैं।

2. **संस्कृति के प्रकट तथा अप्रकट तत्व (Exlicit and Implicit Elements of Cultre) – क्लुखौन** ने संस्कृति के तत्वों को **'प्रकट'** और **'अप्रकट'** दो भागों में बाँटा है। मानव इन्द्रियों के द्वारा हम संस्कृति के प्रकट या बाह्य रूप का ही अवलोकन करते हैं। आँख और कान की सहायता से हम देखकर सुनकर संस्कृति के बाह्य अथवा 'प्रकट' तत्वों के बारे में ही जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। दूसरी ओर संस्कृति में कुछ ऐसे 'अप्रकट' तत्व भी होते हैं जिनका अवलोकन और अनुभव प्रशिक्षित व्यक्ति ही कर सकते हैं। संस्कृति के 'अप्रकट' तत्वों का ज्ञान केवल दक्ष मानवशास्त्रियों द्वारा ही संभव है। इसका कारण यह है कि ये तत्व मानव व्यवहार में निहित अभिप्रेरकों एवं मनोवेगों के रूपों में होते हैं, जिनसे कर्त्ता स्वयं भी प्रायः परिचित नही होता और न ही वह कभी ऐसी आवश्यकता पर विचार ही करता है। किसी भी संस्कृति के अध्ययन के दौरान उनके प्रकट एवं अप्रकट दोनों ही तत्वों का उल्लेख किया जाना चाहिए। **कीसिंग** ने भी संस्कृति के इन दोनों पक्षों का उल्लेख किया है। वे प्रकट तत्व के अंतर्गत उन पक्षों गिनते है, जिन्हें छुआ जा सके, देखा एवं सुना जा सके। ये संस्कृति के मूर्त तत्व होते हैं, जैसे औजार, भवन एवं मानव–निर्मित भौतिक वस्तुएँ, आदि। अप्रकट तत्व में वे न्याय, मूल्य, प्रेरणा, विश्वास, प्रकार्य एवं समन्वय, आदि को सम्मिलित करते हैं, जिनका कोई मूर्त रूप नहीं होता।
3. **संस्कृति निर्धारणवाद (Cultre Determinism)** – कार्ल मार्क्स ने बताया कि सांस्कृतिक विचारधाराएँ, सामाजिक एवं राजनीतिक संरचनाएँ सभी आर्थिक कारणों के द्वारा ही निर्धारित होते हैं। इसके विपरीत संस्कृति–निर्धारणवादियों का मत है कि समाज, आर्थिक संगठन और राजनीतिक व्यवस्थाएँ सभी कुछ संस्कृति के द्वारा ही निर्धारित होते हैं। **टायलर** का मत है कि समाज के सदस्य होने के नाते मनुष्य को संस्कृति प्राप्त होती है, किंतु संस्कृति–निर्धारणवादी मानते हैं कि संस्कृति की अभिवृद्धि एवं क्रियाशीलता स्वय संस्कृति के अपने नियमों द्वारा संचालित होती है। संस्कृति की व्याख्या करने के लिए मानव शारीरिकी मानव–मनोविज्ञान और मानव–समाज इतने सक्षम नहीं है। संस्कृति निर्धारणवाद समाज के सभी पक्षों, धर्म, राजनीति, अर्थव्यवस्था, आदि को परिवर्तित एवं निर्धारित करने में संस्कृति को ही प्रमुख मानते हैं। संस्कृति निर्धारणवादियो में **लेसली ह्वाइट** प्रमुख हैं। उनका मत है कि संस्कृति के विकास में ऊर्जा ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। ऊर्जा के साधनों में परिवर्तन के साथ–साथ संस्कृति और समाज मे भी परिवर्तन होता है, किंतु संस्कृति निर्धारणवादी संस्कृति को ही सब कुछ मानकर अतिवादी हो गये हैं। मानव केवल संस्कृति का दास ही नहीं उसका निर्माता और वाहक भी है।
4. **संस्कृति बनाम व्यक्ति (Cultre Versus Individual) – लिण्टन** का मत है कि जो लोग परम्परावादी होते हैं, उनके लिए संस्कृति की भूमिका एक निर्देशक–सी होती है। संस्कृति उनके लिए व्यवहार के प्रतिमान तय करती है। यही नहीं बल्कि संस्कृति उनके व्यक्तिगत और सामाजिक अस्तित्व के लिए आवश्यक सुविधाएँ भी प्रदान करती है। संस्कृति के बिना मनुष्य जीवित रह ही नहीं सकता। इसीलिए संस्कृति मनुष्य के लिए मुक्तिदायनी है। यह उसे जैविक निर्धारणवाद से मुक्त करती है, किंतु ऐसा तभी संभव है जब व्यक्ति इसका मूल्य चुकाए, संस्कृति के प्रति अपने दायित्वों को पूरा करे। यदि एक व्यक्ति समाज से लाभ प्राप्त करना चाहता है तो उसे समाज की स्वीकृत जीवन–पद्धति का अनुसरण भी करना पड़ता है। आम आदमी ऐसा ही करता भी है। इसी रूप में संस्कृति मानव की निर्देशक है। यह उसे मुक्त भी करती है और अपने अधीन भी रखती है। मनुष्यों से सदैव यह अपेक्षा की जाती है कि वे समाज को जड़ता से बचाएँ। ऐसा करने के लिए जो तरीके अपनाए जाने चाहिए, वे स्वयं संस्कृति ही बताती है, उसी की सीमा में रह कर उनका प्रयोग करना होता है। आवश्यकता इतनी है कि कोई व्यक्ति आगे आए और इन साधनों को काम में ले। **टॉयनबी** ऐसे लोगों को 'सृजनशील अल्पसंख्यक' कहता है। ये लोग अपने नये विचारों का परीक्षण संस्कृति के अंतर्गत ही करते हैं। ये संस्कृति को नष्ट नहीं करना चाहते वरन् अपनी रचनात्मक शक्ति द्वारा उसे बदलना चाहते हैं। उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि व्यक्ति के लिए संस्कृति एक निर्देशक और मुक्तिदायनी की भूमिका निभाती है और सृजनशील व्यक्तियों को अपनी रचनात्मक शक्ति का उपयोग करने की स्वतंत्रता प्रदान करती है।
5. **संस्कृति और सभ्यता (Culture and Civilization)** – सभ्यता और संस्कृति में क्या अंतर एवं संबंध है। इस बारे मे भी विद्वानों में मत भिन्नता है। उद्विकासवादी विचारक **मॉर्गन** का मत है कि मानव समाज का उद्विकास तीन स्तरों से हुआ है। ये हैः जंगली अवस्था, बर्बरावस्था एवं सभ्यता की अवस्था। इस प्रकार मॉर्गन के अनुसार सभ्यता समाज के

उद्विकास की एक अवस्था है जिसमें नगरों क जन्म हुआ, लेखन कला, धातुकर्म एवं विज्ञान, आदि का विकास हुआ। इस प्रकार मानवशास्त्रियों ने सभ्यता का प्रयोग एक विशेष प्रकार की संस्कृति के लिए किया है।

जर्मन आदर्शवाद और इनसे प्रभावित मैकाइवर जैसे अमेरिकन समाजशास्त्री संस्कृति और सभ्यता के बीच विशेष प्रकार का अंतर करते हैं। ये संस्कृति को मनुष्य की नैतिक, आध्यात्मिक और बौद्धिक उपलब्धि मानते हैं। इनकी दृष्टि में संस्कृति प्रतीकों और मूल्यों की परिचायक है। यह प्राथमिक और आधारभूत वस्तु है, हमारे अंतर में विद्यमान है और जो कुछ हम है, वही संस्कृति है। यह प्रगति और अवनति दोनों के लिए उत्तरदायी है सभ्यता गौण है। यह हमसे बाहर स्थित है। प्रौद्योगिकी, भौतिक संस्कृति और सामाजिक संस्थाओं से इसकी रचना होती है। यह सांस्कृतिक जीवन के लिए साधन या उपकरण है। यह संचयशील है। अपने आप न तो इसकी प्रगति होती है और न अवनति ही। संस्कृति अमूर्त है तो सभ्यता मूर्त। सभ्यता एवं संस्कृति के अंतर एवं संबंधों की व्याख्या आगे विस्तार से की गयी है।

6. **संस्कृति और संस्कृति संकुल (Culture and Culture Complex)** – संस्कृति से हमारा तात्पर्य संपूर्ण जीवन–पद्धति से है। इसका निर्माण कई तत्वों से मिलकर होता है, जैसे पूजा, आराधना, कर्मकाण्ड तथा उपकरण, आदि संस्कृति के तत्व हैं। संस्कृति के कुछ तत्व जब अर्थपूर्ण ढंग से जुड़े हुए होते हैं और सम्पूर्ण संस्कृति के एक भाग का निर्माण करते हैं तो उसे संस्कृति संकुल कहते हैं। विभिन्न संस्कृति तत्वों के बीच अंतःसंबंधों के समरूप को भी संस्कृति संकुल कहते हैं।

संस्कृति के उपादान (COMPONENTS OF CULTURE)

संस्कृति का निर्माण करने वाले प्रमुख अंग या उपादान निम्नांकित है :–

(1) सांस्कृतिक तत्व (Culture trait) –

संस्कृति की वह छोटी से छोटी इकाई जिसका और अधिक विभाजन नहीं किया जा सके, सांस्कृतिक तत्व कहलाता है। जिस प्रकार से पदार्थ की छोटी से छोटी इकाई परमाणु है, शरीर की छोटी से छोटी इकाई कोष तथा सामाजिक संरचना का परिवार है, उसी प्रकार से '' संस्कृति की सबसे छोटी अविभाज्य इकाई संस्कृति–तत्व है।'' इसकी परिभाषा करते हुए **डॉ. दुबे** लिखते हैं, ''संस्कृति–तत्वों को हम संस्कृति के गठन की सरलतम व्यावहारिक इकाईयाँ मान सकते हैं''

हरस्कोविट्स इसे एक निर्दिष्ट संस्कृति में पहचानी जाने वाली सबसे छोटी इकाई मानते हैं। **क्रोबर** भी इसे 'संस्कृति का अल्पतम परिभाषित तत्व' कहते हैं।

जेकब्स तथा **स्टर्न** के अनुसार, ''सांस्कृतिक तत्व संस्कृति की वह आविष्कृत तथा हस्तांतरित ईकाइयाँ है जिनकों विवरण या सैद्धान्तिक अध्ययन के लिए विभिन्न भागो में विभाजित नहीं किया जा सकता।

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि सांस्कृतिक तत्व किसी भी संस्कृति की सबसे छोटी एवं अविभाज्य इकाई है। संस्कृति के भौतिक एवं अभौतिक दोनो ही पक्ष हैं, इसलिए सांस्कृतिक तत्व भी भौतिक व अभौतिक दोनो ही प्रकार के होते हैं। भौतिक पक्ष में हम घड़ी, रेडियों, पेन, पंखा, साइकिल, चाकू, टेबल, रूमाल, आदि अनेक वस्तुओं को सम्मिलित करते हैं। अभौतिक क्षेत्र में किसी भी संकेत, शब्द, विचार, किसी एक रीति, प्रथा आदि को सांस्कृतिक तत्व कहेंगे।

सांस्कृतिक तत्व के अविभाज्य होने का यह तात्पर्य नहीं है कि उसका और विभाजन नहीं हो सकता वरन् इसका यह अर्थ है कि उसका विभाजन होने पर वह अर्थपूर्ण नहीं रह जायेगा। उदाहरण के लिए, पेन एक सांस्कृतिक तत्व हैं। यदि हम इसका और विभाजन कर इसकी निब, पोला, आदि को अलग कर देते हैं तो यह विभाजन अर्थपूर्ण इकाई के रूप में नहीं होगा। अतः सांस्कृतिक तत्वों की रचना में भी जटिलता होती है और उनका निर्माण भी तत्वों से मिलकर होता है, जैसे– घड़ी का निर्माण कई पुर्जों से होता है, रेडियों और पंखे में भी कई पुर्जे होते हैं, साइकिल के भी अनेक पुर्जे है। अतः स्पष्ट है कि सांस्कृतिक तत्व मानव के काम आने की दृष्टि से सबसे सरल, छोटी और आगे विभाजित न होने वाली इकाई है।

मानवशास्त्रीयों ने संस्कृति के विभिन्न अंगों की व्याख्या की है। सन् 1917 में **विसलर** ने अपनी पुस्तक **'मैन एंड कल्चर'** में अमेरिका की इण्डियन संस्कृतियों का अध्ययन प्रस्तुत किया, उसी दौरान आपने संस्कृति की रचना का उल्लेख किया और उसके दो मुख्य अंग बताये– प्रथम संस्कृति–तत्व एवं द्वितीय संस्कृति–संकुल। विसलर के बाद अनेक मानवशास्त्रियों ने 'संस्कृति के विभिन्न अंगों एवं संरचनाओं का उल्लेख किया।

सांस्कृतिक तत्व की कुछ प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार हैं –

(i) प्रत्येक सांस्कृतिक तत्व का एक इतिहास होता है, जो उसकी उत्पत्ति को प्रकट करता है। उदाहरण के लिए, हवाई जहाज का भी एक इतिहास है जो इसके निर्माण एवं विकास की कहानी बताता है।

(ii) सांस्कृतिक तत्व, संस्कृति की तरह ही स्थिर नहीं होता है वरन् उसमें परिवर्तन एवं गतिशीलता पायी जाती है। किसी अन्य सांस्कृतिक समूह के सम्पर्क में आने पर ये तत्व बदलते रहते हैं और कभी–कभी सांस्कृतिक तत्वों में परिवर्तन संस्कृति रचना में परिवर्तन ला देता है।

(iii) सांस्कृतिक तत्व पृथक्–पृथक् नही रहते वरन् अन्य तत्वों के साथ घुल–मिलकर रहते हैं। अनेक सांस्कृतिक तत्वों का अध्ययन सम्पूर्ण संस्कृति को अर्थपूर्ण बताता है।

सांस्कृतिक तत्व का अध्ययन सम्पूर्ण संस्कृति को समझने के लिए आवश्यक है। ये ही वे मूल आधार है जिन पर सम्पूर्ण संस्कृति टिकी हुई है। इनके आधार पर ही दो संस्कृतियों की तुलना संभव है। गिलफोर्ड, क्रोबर, रे एवं क्लिमेक, आदि ने सांस्कृतिक तत्वों के आधार पर ही विभिन्न संस्कृतियों का अध्ययन किया। टायलर एवं बोआस ने भी सांस्कृतिक तत्वों के आधार पर विभिन्न संस्कृतियों का तुलनात्मक अध्ययन किया। किसी भी संस्कृति का अध्ययन सांस्कृतिक तत्वों के सहारे करना इतना सरल नहीं हैं क्योंकि सांस्कृतिक तत्व, एक–दूसरे से इतने घुल–मिले होते हैं कि उन्हें अलग करके मूल्यांकन करना बड़ा कठिन है।

(2) संस्कृति संकुल (Culture Complex) -

जिस प्रकार कई कोषों (Cells) से मिलकर एक अंग बनता है, कई परिवारों से एक समुदाय बनता है, कई परमाणुओं से एक अणु बनता है, उसी प्रकार कई सांस्कृतिक तत्वों से मिलकर एक सांस्कृतिक–संकुल बनता है, किंतु ये सांस्कृतिक तत्व अव्यवस्थित रूप से संबद्ध न होकर अर्थपूर्ण ढंग से परस्पर बँधे होते हैं। **डॉ. दुबे** इसे परिभाषित करते हुए लिखते हैं, ''संस्कृति संकुल, जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट है, समान धर्मों अथवा पूरक संस्कृति–संकुल सांस्कृतिक तत्वों का वह समग्र समूह है जो कि इनके अर्थपूर्ण ढंग से परस्पर संबंधित हाने से बनता है।''

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि जब सांस्कृतिक तत्व परस्पर अर्थपूर्ण ढंग से जुड़ जाते हैं और वे मानव आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं तो उसे हम सांस्कृतिक–संकुल कहते हैं। उदाहरण के लिए, हॉकी का खेल एक सांस्कृतिक संकुल है जो गेंद, स्टिक, गोल के खंभे, रेफ्री की सीटी, खिलाड़ियों की पोशाक, खेल के विभिन्न नियमों, फील्ड को प्रदर्शित करने वाली झण्डियों, आदि अनेक सांस्कृतिक तत्वों से मिलकर बना है। ये सब तत्व परस्पर विशेष अर्थों में उसी तरह से जुड़े हुए हैं, जिस प्रकार से कई फूल मिलकर गुलदस्ते का निर्माण करते हैं। नागाओं में नरमुण्ड प्राप्ति (Head hunting) एक सांस्कृतिक–संकुल है, जिसमें अनेक धार्मिक एवं सामाजिक क्रियाओं के रूप से सांस्कृतिक तत्व सम्मिलित हैं। इसी प्रकार से हम युद्ध, यौन–संगठन, भाषा, विवाह आदि को सांस्कृतिक–संकुल के रूप में देख सकते हैं।

सांस्कृतिक एव संकुलों से मिलकर ही एक संस्कृति विशेष का विकास होता है। **पारसन्स** ने प्यूबलो इण्डियनों के धार्मिक अनुष्ठानों पर **बेनेडिक्ट** ने उत्तरी अमेरिका में संरक्षक प्रेतात्मा (Guardian Spirit) के चारों ओर केंद्रित अनुष्ठानों और विश्वासों के संकुलों का अध्ययन किया है।

(3) संस्कृति प्रतिमान (Culture Pattern)

गेस्टाल्ट 'मनोविज्ञान के सिद्धांतों एवं मैलिनोवस्की के संस्कृति–सिद्धांत से प्रभावित होकर **रूथ बेनेडिक्ट** ने अपनी पुस्तक **''पैटर्न्स ऑफ कल्चर''** में संस्कृति प्रतिमान की अवधारणा संस्कृति की मूलभूत प्रेरणाओं और आदर्शों का अध्ययन करती है, जो कि संस्कृति को एक विशेष दिशा एवं स्वरूप देते हैं। रूथ बेनेडिक्ट ने संस्कृति–प्रतिमान की अवधारणा का उल्लेख तीन संस्कृतियों प्यूबलो, डोबू एवं क्वाकिउट्ल के अध्ययन के दौरान किया है। एक संस्कृति प्रतिमान में संस्कृति तत्व एवं संकुल एक विशेष प्रकार से व्यवस्थित होते हैं, जिस प्रकार से घड़ी, रेडियों, मकान, आदि की विभिन्न ईकाइयाँ एक निश्चित तरीके से सुसज्जित है, उनमें एक क्रम एवं व्यवस्था है, उसी प्रकार से संस्कृति–संकुल जब एक विशिष्ट ढंग से व्यवस्थित हो जाते हैं तो संस्कृति–प्रतिमान का निर्माण करते हैं। कई संस्कृति–प्रतिमानों के व्यवस्थित संगठन से एक सम्पूर्ण संस्कृति निर्मित होती है। **हरस्कोविट्स** के अनुसार, ''संस्कृति–प्रतिमान एक संस्कृति के तत्वों का वह डिजाइन है जो कि उस समाज के सदस्यों के व्यक्तिगत व्यवहार प्रतिमान के माध्यम से व्यक्त होता हुआ जीवन के इस तरीके को संबद्धता, निरंतरता एवं विशिष्टता प्रदान करता है।'' बेनेडिक्ट प्रतिमानों को 'आदर्श' या प्रेरक सिद्धांत के रूप में स्वीकार करती है, जो मानव व्यवहार को निर्धारित करते हैं। प्रत्येक संस्कृति में हमें कुछ भूलभूत प्रेरणाएँ, आदर्श या सिद्धांत देखने को मिलेंगे जो दूसरी संस्कृतियों से भिन्न होंगे। इन आदर्शों या सिद्धांतों को सभी लोग स्वीकार करते हैं एवं उन्हे सीखते हैं, जिससे लोगों के व्यवहारों में एकरूपता उत्पन्न होती है। उदाहरण के लिए, प्यूबलों इण्डियन लोगों की संस्कृति में सुव्यवस्था एवं अनुशासन पर जोर दिया जाता है एवं व्यक्तिगत दिखावे को अनुचित माना जाता है। इसके विपरीत, डोबू संस्कृति में भिन्न प्रकार के आदर्श, सिद्धांत एवं जीवन–प्रणाली दिखायी देते हैं। वहाँ के लोग शंकालु, धोखेबाज, अपने को एवं अपनी धारणाओं को दूसरों से श्रेष्ठ मानने वाले तथा संघर्षशील प्रकृति के हैं। क्वाकिउट्ल संस्कृति के लोग अपनी महत्ता के स्वप्न देखते हैं और बड़प्पन दिखाने के लिए विभिन्न प्रकार के प्रदर्शन करते हैं। बड़प्पन और दिखावे की परम्परा ने यहाँ के लोगों के जीवन को काफी प्रभावित किया है।

इस संदर्भ में डॉ. दुबे, बेनेडिक्ट से भिन्न मत प्रकट करते हुए लिखते हैं कि ''संसार की बहुत थोड़ी संस्कृतियाँ ऐसी होगी जिनमें एक विशिष्ट सिद्धांत संस्कृति के प्रत्येक पक्ष को अनुप्रमाणित एवं पूर्ण रूप से संचालित करता हो।'' संस्कृतियाँ ऊपरी तौर पर जितनी सरल एवं आकर्षक प्रतीत होती हैं। वास्तव में वे उससे अधिक जटिल है, उनके जीवन की विभिन्न गतिविधियों एवं प्रवृत्तियों को किसी एक सिद्धांत अथवा आदर्श के द्वारा नहीं समझा जा सकता।

(4) संस्कृति क्षेत्र (Culture Area)

किसी भी संस्कृति के अध्ययन में उसके भौगोलिक पक्ष की अवहेलना नहीं की जा सकती। प्रत्येक संस्कृति एक निश्चित भौगोलिक क्षेत्र तक ही विस्तृत होती है। यदि हम एशिया या यूरोप महाद्वीप की यात्रा करें तो हमें अनेक प्रकार की संस्कृतियों के क्षेत्र देखने को मिलेंगे। यदि हम इन संस्कृतियों की तुलना करें तो पायेंगे कि इन संस्कृतियों की तुलना में जो भौगोलिक दृष्टि से निकट हैं, दूर की संस्कृतियों की तुलना में अधिक समानता है। इससे स्पष्ट है कि सांस्कृतिक तत्वों, संकुलों एवं प्रतिमानों का प्रसार एक निश्चित भौगोलिक क्षेत्र तक होता है, जिसे हम सांस्कृतिक क्षेत्र कहते हैं। सांस्कृतिक क्षेत्र की अवधारणा का प्रयोग सर्वप्रथम विसलर ने अमेरीकी इण्डियन संस्कृतियों के अध्ययन के दौरान किया था। हरस्कोविट्स, क्रोबर, सापिर आदि ने भी सांस्कृतिक क्षेत्र की अवधारणा का प्रयोग संस्कृतियों के अध्ययन में किया औ विभिन्न महाद्वीपों को सांस्कृतिक क्षेत्रों में विभाजित किया। सांस्कृतिक क्षेत्र को परिभाषित करते हुए **डॉ. दुबे** लिखते हैं, ''कतिपय संस्कृति तत्व या सांस्कृतिक–संकुल एक विशेष भौगोलिक क्षेत्र में फैलकर संस्कृति–क्षेत्र का निर्माण करते हैं।'' **हरस्कोविट्स** के अनुसार, ''वह क्षेत्र जिसमें समान संस्कृतियां पायी जाती हैं एक संस्कृति क्षेत्र कहलाता है।'' **हॉबल** के शब्दों में, ''एक संस्कृति क्षेत्र भौगोलिक क्षेत्र के उस भाग के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जिससे संस्कृति इतनी मात्रा मे समानता प्रकट करती है कि उसे उन संस्कृतियों से पृथक कर देती है जो क्षेत्र के बाहर है।''

विसलर एवं क्रोबर ने अमेरीका के आदिवासी क्षेत्रों को पन्द्रह स्वतंत्र सांस्कृतिक क्षेत्रों में विभाजित किया। ऐसा ही

प्रयास अफ्रीका के लिए हरस्कोविट्स ने किया और उसे नौ सांस्कृतिक क्षेत्रों में विभाजित किया। विसलर का कहना है कि यदि हम नयी दुनिया के आदिवासियों को उनके सांस्कृतिक तत्वों के आधार पर विभाजित करें तो हमें खाद्य क्षेत्र, वस्त्र और धर्म क्षेत्र देखने को मिलेंगे। चूँकि संस्कृति सीखी जाती है, अतः कोई भी व्यक्ति किसी भी संस्कृति को सीख सकता है। निकट की संस्कृति को दूर की संस्कृति की तुलना में सीखने के अवसर अधिक होते हैं। संस्कृति–तत्व एवं संकुल एक स्थान से दूसरे स्थान पर प्रसारित होते हैं किंतु दूर तक फैलने के दौरान वे अपनी कई मूल विशेषताएँ खो देते हैं एवं नवीन स्थानीय विशेषताएँ अपना लेते हैं। अतः संस्कृति–तत्व एवं संस्कृति–संकुल मूल रूप में एक सीमित क्षेत्र में ही पाये जाते हैं। विसलर की मान्यता है कि प्रत्येक संस्कृति क्षेत्र में वह केंद्र ढूँढा जा सकता है जहाँ संस्कृति–तत्व एवं संस्कृति–संकुल का प्रसार हुआ है। संस्कृति तत्वों के प्रसार में घने जंगल, रेगिस्तान, महासागर, पर्वत, आदि प्रमुख बाधाएँ है तथा यातायात एव संचार के साधन सहायक है।

संस्कृति क्षेत्र की अवधारणा सांस्कृतिक समानताओं के भौगोलिक क्षेत्र को प्रकट करती है, जिसके आधार पर विभिन्न संस्कृतियों की तुलना की जा सकती है। **हरस्कोविट्स** लिखते है, ''संस्कृति क्षेत्र महत्वपूर्ण है, चूँकि यह, यह दिखाता है कि किस प्रकार से आंतरिक संगठन की भाँति भूमि के विस्तार में भी मानव सभ्यता की एकताएँ कायम रहती है।'' संस्कृति–क्षेत्र की अवधारणा से उन केंद्रों का ज्ञात करना सरल हो जाता है जहाँ संस्कृति–तत्व एवं संस्कृति–संकुल अपने शुद्ध रूप में पाये जाते हैं। वर्तमान में संस्कृति क्षेत्र की सीमा निर्धारण का कार्य कठिन होता जा रहा है क्योंकि यातायात एवं संचार के साधनों ने इसकी सीमा तोड़ दी है। आज सम्पूर्ण विश्व मे अनेक समान संस्कृति तत्व पनप रहे हैं। यहाँ यह ध्यान रखा जरूरी है कि संस्कृति–क्षेत्र की अवधारणा संस्कृतियों के अध्ययन के लिए उपयोगी यंत्र है, एक युक्ति है, जो विद्यार्थियों को एक संस्कृति विशेष का विस्तार ज्ञात करने एवं उससे संबंधित आँकड़ों के संकलन में योग देती है।